राउत नाचा

गौरी त्रिपाठी

छत्तीसगढ़ अपनी तमाम विशेषताओं से युक्त होते हुए भी लोक-कलाओं के लिए विशेष तौर पर विख्यात है यहाँ की हरी-भरी भूमि तालाबों से घिरे गाँव, लोक-संस्कृति बार-बार किसी को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। मनुष्य की पहचान या कहें कि मनुष्यता की पहचान इन्हीं लोक-संस्कृतियों में अब तक बची हुई है, बाकी तो आधुनिकता, भूमंडलीकरण और वैज्ञानिकता की भेंट चढ़ गये हैं। दरअसल जब हम बहुत सभ्य होने लगते हैं तो असभ्यता की श्रेणी में आने लगते हैं। यह हमारी लोक-संस्कृति ही है, जिसने अभी भी हमें अहसास दिला रखा है कि हम मनुष्य हैं। बात करें छत्तीसगढ़ी लोक-संस्कृति की तो लोक-संस्कृति के जितने भी रूप-स्वरूप हो सकते हैं वह सब अपने उत्कृष्ट रूप में यहाँ विद्यमान हैं, फिर चाहे वह पंडवानी, पंथी नृत्य, सुआ नृत्य हो या राउत नाचा। इस लेख में हम राउत नाचा पर विस्तृत चर्चा करेंगे।

मुझे छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में रहते हुए लगभग 3 वर्ष होने वाले हैं। यहाँ गाँव के आस-पास कदम-कदम पर तालाब, जंगल और लोकगीत मुझे बहुत आकर्षित करते हैं। बिलासपुर में खासतौर पर दशहरा के समय रावत नृत्य ने तो मन मोह लिया था। हर प्रदेश की अपनी संस्कृति होती है पर मैं यह कहना चाहूँगी कि अभी भी छत्तीसगढ़ की लोक-कलाओं में वह स्वाभाविकता अपने उसी पुरानेपन के साथ मौजूद है। इसके अतिरिक्त यहाँ के मंदिर नाट्यशालाएँ और भित्ति चित्र भी छत्तीसगढ़ी संस्कृति को विशिष्ट बनाती हैं।

राउत नाचा या छत्तीसगढ़ का कोई भी लोक नृत्य महज नृत्य नहीं है, बल्कि यह इसकी जातीय विशेषता है, जिसमें वे अपने उल्लास, प्रशंसा और धार्मिकता को लोक-जीवन से जोड़ देते हैं। जाहिर है यह सारे नृत्य प्रकृति के साथ जुड़कर अलग-अलग रूपों में हमारे सामने आते हैं। इन लोक संगीत में अक्सर ही हमें मांदर, झांझ, मंजीरे और ढोलक की आवाज सुनायी पड़ जाती है। यहाँ का कोई भी नृत्य होगा तो उस नृत्य में मोर के पंख, सूअर के सिरसे कौड़ी, पत्थरों की मालाएँ आदि जरूर प्रयोग में लायी जाती हैं।

छत्तीसगढ़ के प्रमुख लोक नृत्य इस प्रकार हैं–

पंथी नृत्य, ककसार नृत्य, मुरिया नृत्य, राउत नृत्य, सुआ नृत्य, डंडा नृत्य, डोमकच नृत्य, गैड़ी नृत्य, कर्मा नृत्य, सरहुल नृत्य, गौर माड़िया नृत्य, पंडवानी नृत्य छत्तीसगढ़ राज्य के लोक नृत्यों में प्रमुख है। हमारी जातिगत विशेषताएँ भी लोक में एक नया रंग घोल देती हैं। हम उसे कोई भी नाम दे सकते हैं। जातिगत संस्कृति रहन-सहन, पहनने-ओढ़ने के ढंग, खाना-पीना इन सब के माध्यम से भी सुरक्षित हैं। रावत जातियों ने अपनी प्राचीन धरोहरों को तमाम तरीकों से बचाये रखा। देश के कोन-कोने तक शिक्षा के पहुँचने के बाद भी रावतों ने अपनी प्राचीन धरोहरों को बिसराया नहीं है। यादव, पहटिया, ठेठवार और राउत आदि नाम से संसार में प्रसिद्ध इस जाति के लोग इस नृत्य पर्व को 'देवारी' के रूप में मनाते हैं।

राउत नृत्य तीन चरणों में दिखायी देता है–सुहई बाँधना, मातर पूजा और काछन चढ़ाना।

माँ लक्ष्मी के पूजन 'सुरहोती के दूसरे दिन गोवर्धन पूजा का विधान है। राउत अपने इष्ट देव की पूजा करके अपने मालिक के घर सोहई बाँधने जाते हैं। गाय के गले में सोहई बाँधकर उसकी मंगल कामना करते हैं और गीत गाते हैं–

“सुहाई बनायेंव अचरी पचरी गाँठ दियो हरैया।

जउन सुहाई लछारही, ओला लपट लागे गौरैया।।”

गाय अपने आस-पास आत्मीय जनों को देखकर रंभाने लगती है। सुहाई बाँधते समय गायों को सुहाई से सजाया और बैलों को गैहाटी बाँधा जाता है। सुहाई बाँधते समय रावत लोग इस गीत को गाते हैं–

“एसो के बन बरसा

घरसा परगे हील

गाय कहेंव रे लाली

संगे रेंगाबो पीले।”

रावत समाज जब नृत्य करने निकलता है तो पूरे समाज के साथ निकलता है, जिसमें वे अपने को मोर पंख से सजाये रहते हैं तथा मांदर, ढोलक, झांझ और डंडा के साथ गीत गाते हुए अपने मालिकों के घर जाते हैं। इस बीच ये लोग गीत भी गाते हैं–

“उठे रहेव मालिक नौ दस लगगे वासे।

भीतर दुलरवा दूध पीये बाहिर धुले रनवासे।।”

यहाँ मालिक के लड़के को 'दुलरवा' और मिट्टी के घर को 'रनवास' कहा गया है। आँचलिक गीतों में आत्मीयता प्रकट होती है। लोक संगीत की हर धुन पर कोई भी नाचने पर विवश हो जाएगा–

“एक सिंग तो ऐसे तैसे

एक सिंग तोर डंडा।

गीजर गीजर के आबे रे

खैरका डांढ़ तोर मूढ़ा।”

रावतों का दल सोहाई बाँधने के बाद दान दाता मालिक के लिए मंगल कामनाएँ करता है। इस शुभ अवसर पर लाठी और देव पितरों की पूजा की जाती है। नाचते और गाते रावतों को मालिक रुपया-पैसा या धान देकर विदा करते हैं। इस पर रावत फिर से गान करते हैं–

“हरियर चक चंदन, हरियर गोबर आबिना।

गाय गाय कोठा भरे, बरदा भरे शौकीन।"

यह रावत नाचा पूरी एक प्रक्रिया में चलता है, जिसमें वे पशुओं के स्वास्थ्य की भी कामना करते हैं–

"बरतरी बाँधेव बछरू

साल भर माड़गे गाई

हँस हँस बाँधेव सोहाई संगी

पारव राम दोहाई।"

सोहाई बाँधने के बाद दान देने वालों के लिए मंगल कामनाएँ की जाती हैं। इस अवसर पर लाठी और देव पितरों की पूजा की जाती है।

और रावत अपने मालिक के लाख बरस जीने की कामना करते हुए लौट जाते हैं–

"जइसे के मालिक लिए दिये

तइसे देबे आसीसे।

रंग महल में बैठो मालिक

यो लाख बरीसे।।"

और तीसरी प्रक्रिया होती है–काछन चढ़ाना। नाचते गाते देव पितरों की पूजा करते उन्हें अपने शरीर में चढ़ा लेते हैं और गाने लगते हैं–

"एक कांछ कांछैव भईया, दूसर दियेंव लभाई।

तीसर कांछ कांछैव त माता-पिता के दुहाई।।"

रावत नृत्य का महत्त्वपूर्ण प्रदर्शन रवताही बाजार या मड़ई में होता है। डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र इसे इंद्रध्वज की संज्ञा देते हुए लिखते हैं–"रावतों द्वारा धारण किये जाने वाली कौडी लक्ष्मी का प्रतीक है और मोर पंख मंत्र-तंत्र अभिचार या अन्य विपत्ति रूपी सर्पों के प्रतिकार का प्रतीक है।"

"पूजा करय पुजेरी संगी, धोवा चाऊर चढ़ाई।

पूजा होवत हे लक्ष्मी के, सेत धजा फहराई।।"

सवाल उठता है कि क्या है राउत नाचा? जो लोक में इतना पसंद किया जाता है।

राउत नाचा यादव/यदुवंशियों द्वारा किया जाने वाला नृत्य है, एक जाति जो स्वयं को कृष्ण का वंशज मानती है। उनके लिए यह कृष्ण को समर्पित होता है। वे 'देवोत्थान एकादशी' के समय नृत्य करते हैं।

ऐसा माना जाता है कि यह हिंदू पंचांग (कैलेंडर) के अनुसार देवताओं के जागरण का समय है। यह नृत्य कृष्ण के नृत्य या रास लीला की तरह होता है।

छत्तीसगढ़ समृद्ध परंपरा और संस्कृति के साथ आज भी जुड़ा है। यहाँ रहने वाली तमाम जनजातियों ने भारत को वैविध्य प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। समृद्ध संस्कृति और विरासत का राज्य है–छत्तीसगढ़। यहाँ जनजातियाँ बस्तर, रायपुर, बिलासपुर, दंतेवाड़ा, कोरबा, मणिपुर आदि राज्यों में रहती हैं और अपनी अनूठी जीवन शैली को बढ़ावा देती हैं। सांस्कृतिक त्यौहार और प्रदर्शन ही उन्हें एक साथ बांधते हैं और उस सामान्य सूत्र को प्रकट करते हैं, जो इस असंख्य आदिवासी आबादी को एक-दूसरे से जोड़ता है। जनजातियाँ मनोरंजन के लिए और कभी-कभी समुदाय के भीतर कुछ अनुष्ठानों को मनाने के लिए नृत्य करती हैं। छत्तीसगढ़ की लोकप्रिय जनजातियों में गोंड, मुरिया, अबुजमरिया, हलबा, धुरवा, मुंडा, बाइसनहॉर्न मारिया, कावर, धनवार आदि शामिल हैं।

यह राउत नाचा धार्मिकता से भी जुड़ कर पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है। वैसे भी भारत की लोक परंपराएँ और लोक साहित्य किसानी जीवन से जुड़े हुए हैं। राउत नाचा भी एक प्रकार से चरवाहों के गीत के रूप में दिखायी देता है। राउत नाचा की शुरुआत छत्तीसगढ़ राज्य में हुई है। यह अपनी सज-धज में रासलीला की तरह लगता है। अब तो पूरा देश इस नृत्य को करता है, क्योंकि कृष्ण को किसी-न-किसी रूप में हर संस्कृति स्वीकार करती है। यह नृत्य अथाह उत्साह और उमंग मांगता है, क्योंकि कृष्ण का जीवन और स्वभाव तो खुद ही लोक परंपरा से जुड़ा था। कहते हैं 'खेलन में को काको गुसैया' तो संस्कृति में तो ईश्वर भी सामान्य मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं। ठीक इसी तरह राउत नाचा प्रत्यक्ष रूप से ईश्वर को भी जमीन पर उतार देता है।

राउत नाचा की वेश-भूषा पुरुष और महिला दोनों कलाकारों के लिए बहुत चमकदार और ज्यादातर पीले रंग की होती है। महिला कलाकार आमतौर पर साड़ी पहनती हैं। पुरुष कलाकार अपने सिर पर पगड़ी के साथ साधारण कुर्ता और धोती पहनते हैं। नर्तक खुद को पीठ के चारों ओर मोर के पंखों से अलंकृत करते हैं। वे प्रदर्शन में और भी अधिक धुन जोड़ने के लिए घुँघरू का उपयोग करते हैं। इसके साथ ही, नृत्य का मुख्य आकर्षण लाठी और धातु की डिस्क है, जिसे वे नृत्य करने के लिए एक साथ पीटते हैं।

राउत नाचा के साथ साज-सज्जा भी मायने रखती है। नृत्य और संगीत की खूबसूरती साज-सज्जा से और भी बढ़ जाती है। यह मनुष्य की एक खूबी है कि वह कला को बहुत महत्व देता है। वर्तमान में प्रयुक्त नृत्य कला, संगीतकला, ललित कला, शिल्पकला आदि उसके भाव-गम्य गहन अनुभूति के बाह्य चित्रण एवं अभिव्यक्ति के विविध कलात्मक रसात्मक माध्यम हैं। कलाओं में वह शक्ति छिपी रहती है, जो सबको सहसा क्षण भर के लिए अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। कला की अद्भुत चित्रकारी को देखकर वह ठगा-सा रह जाता है। नर्तक-नर्तकी के चपल चरण की नर्तनता, संगीत का मधुर सरगम और गायक की सुरीली तान, तीनों का संगम देख मानव रोमांचित हो उठता है और गदगद भरे कंठ से वाह-वाह कह उठता है।

देवभूमि भारत के शस्य श्यामला हरित नमित पुण्य धरा के क्रोड़ में रहने वाली कोटिशः जातियाँ आनन्द से, उमंग से उछलते कूदते दिखायी देती हैं। इस विशाल देश में हजारों जातियाँ अपना-अपना पर्व उत्सव मनाती हैं। वर्ष भर यहाँ पग की चपलता, नृत्य, संगीत का स्वर संगम होता रहता है। इस पुण्य धरा पर अनेक पर्वों में से इस राउत नाचा पर्व ने अपना विशेष गौरवपूर्ण स्थान बनाया है। कृष्ण हमारे लोक व्यवहार में ज्यादा प्रचलित हैं, उनकी सभी कहानियाँ सभी गीत इस राउत नाचा के प्राण तत्व होते हैं। इस पर्व का समाज पर इतना अधिक प्रभाव है कि इसमें राउत जाति ही नहीं वरन् समाज की प्रत्येक इकाई को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। यह पर्व एक जाति का नहीं जन-जन का पर्व बन गया है। दरअसल यह सारे पर्व लोगों को आपस में जोड देते हैं, जिससे परस्पर सौहार्द ही बढ़ता है।

छत्तीसगढ़ प्राकृतिक रूप से जितना सुंदर है अपने अंचल को उसने लोक-कलाओं से भी उतना ही सुंदर बना रखा है। यह धरती एक लंबा इतिहास अपने अंदर समेटे हुए हैं जहाँ से लोक नृत्य करमा, ददरिया, पंडवानी, सुआ, राउत नाचा इत्यादि कलाएँ दिखती हैं। नृत्य की कलाओं में राउत नाचा को सबसे पुराना माना जाता है।

राउत नाच लंबी अवधि तक चलता है। एक पखवाड़े तक अबाध रूप से सूर्यास्त के समय से आधी रात बीतने तक चलता रहता है। इस दौरान नृत्य महोत्सव में राउत नर्तक शोभा सौंदर्य देखते ही बनता है। विभिन्न प्रकार के वस्त्राभूषण से सुसज्जित अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र हाथ में संभाले हुए, वाद्य यंत्रों की उन्मत्त कर देने वाली गड़वा बाजा की ध्वनि ताल के साथ दल-के-दल एक साथ नृत्य करते हैं। नृत्य करते हुए जब रावत दल गाँव-शहर की परिक्रमा करते हैं तो उस क्षण मन इतिहास के पन्ने उलटने लगते हैं और मन की दृष्टि उस वीर युग की झाँकी देखने लगती है, जबकि ऐसे ही वीर वेश से सज्जित यादव जाति के लोग पुरातन युद्ध की कला में पारंगत-योद्धा थे। राउतों की आकर्षक वेश-भूषा वाद्यों की मनभावनी स्वर लहरी व लोकप्रिय गीतों की मोहक ध्वनि के कारण ही राउत नाच सजीव हो उठता है। यह नृत्य दर्शकों में भी उत्साह भर देता है। छत्तीसगढ़ी लोक पर्व आने पर आमतौर पर यहाँ के स्थानीय आभूषण पुरुष और महिलाएँ दोनों पहनते हैं।

मनुष्य की अपने को सजाने की सहज प्रवृत्ति लोकांचलों में भी है। लोक नर्तक दल अपने को सजाने के लिए बढ़िया किस्म के आकर्षक रंग-बिरंगे वस्त्र-आभूषण पहनते हैं, जिनमें स्थानीय छाप होती है। नर्तकों की साज-सज्जा पर दृष्टिपात करने से निम्नांकित स्वरूप का दर्शन होता है-मुख पीले रंग से पुता हुआ, आँखों में काजल लगाए, चुस्त सलूखा, धोती के पहरावे के साथ कौड़ियों के कमर पट्टे, जिरह-बख्तर की भांति कसे कमर तक पेट पीठ को ढंके हुए सलमे-सितारे जड़े हुए चमकते मखमली जाकेट, बाँहों में बकहंर, सिर पर कसी पगड़ी के ऊपर सुशोभित मोर पंख की कलगी, गले में तिलरी, पुतरी व माला धारण किए हुए होते हैं। साथ ही कमर जलाजल से सुशोभित, पैरों में घुटनों तक ऊँचा मोजा और जूता, जिसमें घुंघरु बंधे हुए, एक हाथ में लाठी और दूसरे हाथ में ढाल संभाले वीर और श्रृंगार को एक साथ साधते हैं। राउत नाच के नर्तकों की संपूर्ण साज-सज्जा बहुत विशिष्ट होती है।

वस्त्र, आभूषण, शृंगार

वस्त्र–राउत नर्तक नाच के समय विभिन्न प्रकार के वस्त्र व कपडे से बने अन्य परिधान धारण करते हैं–

1. पागा–सिर पर पर्याप्त कपड़े की पगड़ी होती है यह रंगीन होती है, इसे 'पागा' कहते हैं। पागा धारण करने के पश्चात् इसे फूल व रंगीन कागज की मालाओं से सजाते हैं। कोई मोर पंख कलगी भी लगाते हैं। पागा कपड़े में मरोड़ देकर बनाया जाता है। जो लाठी के वार से सिर को बचाने में सहायक होता है।

2. सलूखा–नर्तक कमर के ऊपर तक कुर्ते की जगह 'सलूखा' धारण करते हैं। पूरी बाँहों की कमीज को सलूखा कहते हैं। इसे आॅस्किट के नीचे पहना जाता है। सलूखा रंग-बिरंगी कपड़े से बनायी जाती है।

3. आॅस्किट–सलूखे के ऊपर 'आस्किट' पहना जाता है। काले, लाल, नीले रंग के मखमली कपड़ों को ही आॅस्किट कहते हैं, उसमें चमकीले सलमे सितारे सजाए जाते हैं। कुछ में आकृति बनाते हैं, कहीं पृष्ठ भाग में नाम सितारे से जड़वा लिए जाते हैं।

4. चोलना–अधोवस्त्र के रूप में नर्तक 'चोलना' धारण करते हैं, जो चड्डा का ही एक रूप होता है, किंतु यह घुटनों तक कसा हुआ होता है। इसे सुन्दर बनाने के लिए फुंदरे लगाये जाते हैं। संपन्न राउत चोलना के स्थान पर बटे कोर की धोती पहनते हैं। यह धोती सफेद रंग की और रंगीन कोर की होती है।

5. कांछा–'कांछा' मुख्यतः लाल रंग के कपड़े की लगभग तीन गज लम्बी पट्टी होती है। इसे नर्तक अपनी कमर में बाँधता है।

6. गेटिस–'गेटिस' पलंग की निवाड़ की तरह होता है। इसे घुटने के नीचे लपेट कर बाँधा जाता है।

7. मोजा–'मोजा' पाँव के पंजे से लेकर घुटने तक पहना जाता है। गेटिस न पहनने वाले इसे धारण करते हैं। मोजे के ऊपर जूता धारण करते हैं।

आभूषण–राउत नर्तक अपने को सजाने के लिए विभिन्न प्रकार के आभूषणों को धारण करते हैं। इनमें मुख्यतः तिलरी, लुरकी, बहंकर, जजेवा, माला, साजू, करधन, झाल आदि धारण कर नृत्य करते हैं।

1. लुरकी–यह सोने या चाँदी का बना एक छल्ला होता है, इसे संपन्न राउत कानों में धारण करते हैं। सामान्य राउत फूल खोंसते हैं।

2. तिलरी–यह सोने से निर्मित गले का गोलाकार आभूषण है। इसके अंत में लाख के एक-एक गोले पिरो दिये जाते हैं इससे सुंदरता बढ़ जाती है।

3. कलदार–यह भी गले का ही आभूषण है। चाँदी के सिक्को में छोटा-सा छल्ला जोड़कर उन्हें मजबूत धागे में पिरो दिया जाता है।

4. जजेवा–यह गाय की पूँछ से बनता है तथा इसे कंधे में पहना जाता है।

5. बहंकर–कौड़ियों से बने बाहुबलय को बहंकर कहा जाता है। इसका उपयोग बाँह की रक्षा व सुंदरता के लिए करते हैं।

6. पेटी–'पेटी' का निर्माण कौड़ियों से होता है। कौड़ियों के नीचे कपड़े का अस्तर देकर कौड़ियों को पटसन के धागे से आपस में जोड़ते हैं। जुड़े हुए कौड़ियों को विभिन्न प्रकार से आकर्षक बनाते हुए कपड़े में सिलते हैं। कौड़ियों के बीच-बीच में काँच जड़कर कशीदा कर पेटी को सुंदर बनाया जाता है। कौड़ियाँ बहुत मजबूत होती है अतः इसे कोई हथियार बेध नहीं पाता।

7. झाल–'झाल' मयूर पंख से निर्मित झालर को कहते हैं, इसे पीठी में धारण किया जाता है।

8. करधन–यह कमर में धारण किया जाने वाला चाँदी की कौड़ियों से बना चौड़ा पट्टा होता है। राउत नर्तक सज्जा तथा धोती को कसकर बाँध रखने के लिए इसको पहनता है।

श्रृंगार–राउत नर्तक अपने चेहरे को सुंदर बनाने के लिए श्रृंगार साधनों का सहारा लेता है। चेहरे में रामरज लगाने के बाद भौंहों के ऊपर अभ्रक चूर्ण अथवा सफेद रंग की बुदकियाँ अंकित कर चेहरे को सजाते हैं। माथे पर लगे सिंदूर का टीका 'सुरकी' कहलाता है, आँखों में काजल, दोनों गाल पर डिठौनी पर ठुड्डी पर काजल के तीन तिल लगा कर अपने को सज्जित करता है। चूँकि पूरा समाज बदल गया है, हमारे जीने का ढंग बदल गया है, तो लोक-परंपराओं में भी यह बदलाव स्वाभाविक है। आज के युवा राउत नर्तक परंपरागत वेश-भूषा तो धारण करते ही हैं, किंतु उनमें आधुनिक वस्त्राभूषण व श्रृंगार का भी सम्मिश्रण हो गया है।

नये ढंग से वस्त्र, हाथ में घड़ी, आँखों में चश्मा, पैरों में रबर या कपड़े के जूते आधुनिकता का ही परिणाम है। अंत में यही कहा जा सकता है कि वेश-भूषा ही इस बात का प्रमाण है कि गरीबी में भी अहीर युवा व वृद्ध के माथे पर पगड़ी शरीर पर कसी हुई छोटी पागी, हाथों में नोई तथा तेंदू की मजबूत लाठी अवश्य होगी। यह उनकी पहचान है, यह उसका परिचय है। हालांकि अब बहुत कुछ बदल गया है।

बगैर राउत नाचा के दोहे सुनें राउत नाचा पर कोई बात नहीं हो सकती। यह दोहे ही राउत नाचा को प्रभावी बनाते हैं। यह सारे दोहे रामायण, महाभारत और लोक-कथाओं से अच्छे खासे अर्थों में जुड़े हुए हैं। कुछ गीतों की बानगी जरूर देखनी चाहिए–

"ये चित्रकूट के घाट में, भय सन्तन के भीड़ हो।

तुलसी दास चन्दन घिसय, अउ तिलक लेत रघुबीर हो।।

अड़गा टूटे बड़गा टूटे, अउ बीच म भूरी गाय हो।

उहाँ ले निकले नन्द कन्हैया, भागे भूत मसान हो।।

हाट गेंव बाजार गेंव, उँहा ले लाएव लाडू रे।

एक लाडू मार परेव, राम राम साढू रे।।

कागा कोयली दुई झन भईया, अउ बइठे आमा के डार हो।

कोन कागा कोन कोयली के बोली से पहचान हो।।

भरे गाँव गितकेरा बाबू, बहुते उपजे बोहार हो।

पाइया लागव बंसी वाले के, झोकव मोरो जोहार हो।।

जै जै सीता राम के भैया, जै जै लक्षमण बलवान हो।

जै कपि सुग्रीव के भईया, कहत चलै हनुमान हो।।

बाजत आवय बासुरी, अउ उड़त आवय धूल हो।

नाचत आवय नन्द कन्हैया, खोचे कमल के फूल हो।।

सब गोपियन के बीच बइठे, छेड़े प्रीति के तान।

गाय चरइया मन के मोहना, गोकुल के नन्द लाल।।

राम-राम के बेरा संगी, राम के गुन लगाए हो।

जग के तारन हारी भईया, भौं सागर पार लगाए हो।।

आगे देवारी तिहार रे संगी सुनता के दिया जलाले हो।

फुलयँ फरयँ सब बाढ़यँ भइया, मिल के दिन बिताले हो।।

उचकीच घोड़िया मोहबा के, अउ ऊदल कुदावय घोड़।

चढ़ के देखय रानी सुरमा, पहुँचय देवरा मोड़।|

ये बाघ बजावै बघ डुम्मर रे, अउ कोल्हू मिलावै कुच।

अहीर बजावै बासुरी त, नाचय झांझ मंजूर।।

मातर-मातर कहिथें भइया मातर जीव के काल रे।

कोख फुट माड़ी कोहनी, अउ कोखरो फुटय कपार रे।।

कौड़िन कौड़िन माया ल जोरे, जोरे लाख करोड़।

आही बुलऊवा राम के ले जाहय निगोटी छोर।।

सरस्वती ने सुर दिए, गुरु ने दिए ज्ञान।

माता पिता ने जन्म दिए, रूप दिए भगवान।।

सबके लाठी रिंग चिंगी, मोर लाठी कुसवा रे।

नवा नवा बाई लाएव, उहू ल लेगे मुसवा रे।।

आगे देवारी तिहार रे भईया, घर घर दिया जलाए हो।

नवा नवा कपड़ा पहिने, अउ घर आंगन सजाए हो।।

जय महामाई मोहबा के भईया, अखरा के गुरु बैताले।

चौसठ जोगनी जासल के भईया, भुजा म हो हो सहारे।।

भाई दुलारे बहिनी, अउ बहिनी दुलारे भाई।

मोला दुलारे मोर दाई दद, गोरस दूध पिलाए।।

आवत देबो राम रमईया, अउ जावत देबो आशिशे।

दुधे खाईहौ पुते फलीहौ, जिहौ लाख बरिसे।।

पौनी पौनी के ह मालिक भये संगी, गिन गिन के कोतवाल हो।

पूछत पूछत आएन संगी, तुहर आंगन द्वार।।

पूजा परत पुजेरी के संगी, धोवा चाँउर चढ़ाय।

पूजा परत मोर गोवर्धन के भईया, सोभा बरन नई जाय।।

तोर मया के छाइहा म दाई, फरेन फूलेन हरियाएन।

छत्तीसगढ़ीन दाई हमर, लईका लोर कहाएन।।

मोर गाँव के मुखिया तोला सुमिरौं, कोठा के गोरैईया।

मेंड़ो तीर के कुड़हीन दाई, मथुरा के गाय चरईया।।

राम, लखन घर ले निकल के चले हे दुनों भइय्या।

राम के प्यारी जनक दुलारी संग म सीता मइय्या।।

बीच समुंदर डोंगा रहे, आऊ खेवत हस पतवार।

रहे भरोसा राम के, पार लगाय भवसागर।।

बार-बार बरजेवरे केवटा झन डालबे तै नदी मजाल रे,

देखे घाट करिंगा के रे गिरही रात बिकाल रे।।

वृन्दावन के वृक्ष के वृक्ष रे, के मर्म न जाने कोय,

डाल डाल और पत्र म भईया राधे राधे होय।।

नदिया तीर मा बैहे कोकडा संगी अउ मछरी बिन बिन के खाये हो।

कोकडा के पाछु म काटा गढ़ के कोय कोय नरियाय हो।।

रंग सागर के महावीर ल सुमिरव संगी, आऊ

मरार बड़ी महमाई हो, आऊ बस्ती के ठकुर देव हो,

गौरी के गनपति भये, अंजनी के हनुमान रे।

कालिका के भैरव भये, कौसिल्या के लछमन राम रे।।

गाय चरावे गहिरा भैया, भैंस चराय ठेठवार रे।

चारों कोती अबड़ बोहावे, दही दूध के धार रे।।

गउ माता के महिमा भैया, नी कर सकी बखान रे।

नाच कूद के जेला चराइस, कृष्णचंद्र भगवान रे।।

नारी निंदा झन कर गा, नारी नर के खान रे।

नारी नर उपजाव भैया, धुरू: पहलाद समान रे।।

दू दिन के दुनिया माँ संगी, झन कर बहुतें आस रे।

नदी तीर के रुखड़ा भैया, जब तब होय बिनास रे।।

तेल फूल मा लईका बाढ़े पानी मा बाढ़े धान रै।

बात बात माँ झगरा बाढ़े अठ खिनवा माँ बाढ़े कान रे।।

पांव जान पनही मिले, घोड़ा जान असवार रे

सजन जान समधी मिले, करम जान ससुरार रे।।"

यह सारे गीत राउत नाचा में गाये जाते हैं। हालांकि आजकल राउत नाचा के गीत थोड़े आधुनिक तर्ज पर भी गाये जाने लगे हैं, लेकिन असली राउत नाचा के गीत तो वही हैं, जो छत्तीसगढ़िया पारंपरिक धुन पर गाये जाते हैं। राउत नाचा छत्तीसगढ़ की पूरी परंपरा को एक छोटे नृत्य के साथ प्रस्तुत करता है और उसका प्रतिनिधित्व करता है। हमें ऐसा लगता है कि लोक-कलाओं को ग्रामीण जनों ने ही संरक्षित कर रखा है। हालाँकि कुछ सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाएँ भी लोक साहित्य और लोक-कलाओं के संरक्षण में जुटी हुई हैं, लेकिन उनका रास्ता ज्यादातर व्यवसायिकता की तरफ चला जाता है जहाँ पहुँचने पर लोक-कलाएँ कभी-कभी दम तोड़ देती हैं। इसलिए जरूरत है कि हम इन लोक-कलाओं को इसके स्वाभाविक और सहज रूप में ही संरक्षित करें।

गौरी त्रिपाठी,

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय बिलासपुर,

छत्तीसगढ़